श्री साईसच्चरित

।। अथ श्रीसाईसच्चरित।। अध्याय ३० वा।।

।। श्रीगणेशाय नमः।। श्रीसरस्वत्यै नमः।। श्रीगुरुभ्यो नमः।। श्रीकुलदेवतायै नमः।। श्रीसीतारामचंद्राभ्यां नमः।। श्रीसद्गुरुसाईनाथाय नमः।। ओम नमो जी साई सदया। भक्तवत्सला करुणालया। दर्शनें वारिसी भक्तभवभया। नेसी विलया आपदा।।१।। आरंभीं वसती निर्गुणीं। तो तूं भक्तभावांचियां गुणीं। ओवूनि आणिलासी सगुणीं। संतचूडामणी साईनाथा।।२।। निजभक्तोद्धारणकार्य। संतां सर्वदा अपरिहार्य। तूं तर संतवृंदाचा आचार्य। तुजसीही अनिवार्य तें आहे।।३।। जिहीं धरिलें तव चरणद्वय। पावले सकळ किल्मिष लय। जाहला पूर्वसंस्कारोदय। मार्ग निर्भय निष्कंटक।।४।। आठवूनियां आपुले चरण। येती महातीर्थींचे ब्राह्मण। करिती गायत्रीपुरश्चरण। पोथीपुराण वाचिती।।५।। संस्कारहीन अल्पशक्ती। काय आम्ही जाणूं भक्ती। टाकिलें जरी आम्हां समस्तीं। साई न देती अंतर।।६।। जयावरी ते कृपा करिती। अचिंत्य महाशक्ती पावती। आत्मानात्मविवेकसंपत्ती। सवेंचि प्राप्ती ज्ञानाची।।७।। साईमुखवचनलालसे। भक्तजन होऊनि पिसे। शब्दशब्दांचे जोडूनि ठसे। पाहत भरंवसे प्रतीती।।८।। निजभक्तांचा मनोरथ। जाणे संपूर्ण साईनाथ। पुरविताही तोच समर्थ। तेणेंचि कृतार्थ तद्भक्त।।९।। धांव पाव गा साईनाथा। ठेवितों तुझिया चरणीं माथा। विसरोनियां अपराधां समस्तां। निवारीं चिंता दासाची।।१०।। ऐसा संकटीं गांजितां। भक्त स्मरे जो साईनाथा। तयाचिया उद्विग्न चित्ता। शांतिदाता तो एक।।११।। ऐसे साई दयासागर। कृपा करिते झाले मजवर। तेणेंच वाचकां झाला हा सादर। ग्रंथ मंगलकारक।।१२।। नातरी माझा काय अधिकार। कोण हें कार्य घेता शिरावर। ज्याचा तोच निरविता असल्यावर। कायसा भार मजवरता।।१३।। असतां मद्वाचाप्रकाशक। साई समर्थ ज्ञानदीपक। अज्ञानतमविध्वंसक। किमर्थ साशंक असावें।।१४।। त्या दयाघन प्रभूचा भरंवसा। तेणें न वाटला श्रम अणुमात्रसा। पुरला माझे मनींचा धिंवसा। कृपाप्रसाद हा त्याचा।।१५।। ही ग्रंथरूपी संतसेवा। माझ्या पूर्वपुण्याईचा ठेवा। गोड करूनि घेतली देवा। धन्य दैवाचा तेणें मी।।१६।। गताध्यायीं जाहलें श्रवण। नानापरीचे दृष्टांत देऊन। कैसें भक्तांस बोधप्रदान। साई दयाघन करीत ते।।१७।। आतां प्रकृताध्यायींही एक। सप्तशृंगी देवीचे उपासक। तयांचें हें गोड कथानक। आनंददायक परिसिंजे।।१८।। देवदेवी निजभक्तांप्रती। कैसे निरविती संतांहातीं। ही तरी एक चमत्कृती। सादर चित्तीं अवलोका।।१९।। महाराजांच्या कथा बहुत। एकाहूनि एक अद्भुत। हीही कथा श्रवणोचित। सावचित्त परिसावी।।२०।। कथा नव्हें हें अमृतपान। येणें पावाल समाधान। कळोन येईल साईंचें महिमान। व्यापकपणही तैसेंच।।२१।। चिकित्सक आणि तर्कवादी। इंहीं न लागावें यांच्या नादीं। येथें नाहीं वादावादी। प्रेम निरवधी पाहिजे।।२२।। ज्ञानी असून व्हावा भाविक। श्रद्धाशील विश्वासूक। किंवा संतांघरींचा पाईक। इतरां या माईक काहण्या।।२३।। हा साईलीलाकल्पतरु। निर्विकल्प फलपुष्पधरु। असेल भक्त भाग्याचा सधरु। तोचि उतारू ये तळीं।।२४।। ऐका हो कथा परम पावनी। परमार्थियां मोक्षदानी। सकळ साधनां पोटीं मुखरणी। कृतकल्याणी सकळिकां।।२५।। सहजें जडजीवोद्धारण। तें हें साईकथामृतपान। प्रापंचिकांचें समाधान। मोक्षसाधन मुमुक्षुवां।।२६।। करितां एक कल्पना एथ। पावे आणिक कल्पनातीत। म्हणोन हेमाड होऊनि विनीत। श्रोतयां पालवीत श्रवणार्थ।।२७।। ऐसी एकेक कथा कथितां। वाढेल लीलारसास्वादता। होईल समाधान भवदवार्ता। साईसमर्थता ती हीच।।२८।। जिल्हा नाशिक ग्राम वणी। काकाजी वैद्य नामक कोणी। असती तेथें वास्तव्य करूनि। उपाध्ये ते स्थानीं देवीचे।।२९।। देवीचें नाम सप्तशृंगी। उपाध्ये अस्थिर अंतरंगीं। अनेक दुर्धर आपत्तिप्रसंगीं। संसारसंगीं गांजले।।३०।। येतां कालचक्राचा फेरा। मन हें भोंवे जैसा भोंवरा। देहही धांवे सैरावैरा। शांती क्षणभरा लाधेना।।३१।। तेणें काकाजी अति दुःखित। जाऊनियां देवळाआंत। देवीपाशीं करुणा भाकीत। चिंताविरहित व्हावया।।३२।। मनोभावें केला धांवा। देवीही तुष्टली पाहूनि भावा। तेच रात्रीं दृष्टांत व्हावा। श्रोतीं परिसावा नवलावा।।३३।। देवी सप्तशृंगी आई। काकाजीच्या स्वप्नीं येई। म्हणे तूं बाबांपाशीं जाईं। मन होईल सुस्थिर।।३४।। हे बाबा कोठील कवण। करील देवी स्पष्टीकरण। म्हणवून काका जैं उत्कंठित मन। नयनोन्मीलन पावले।।३५।। जिज्ञासा ती तैसीच राहिली। स्वप्नवृत्ति तात्काळ मावळली। काकाजीनें बुद्धी चालविली। 'बाबा' जे वदली ते कोण।।३६।। असतील 'बाबा' त्र्यंबकेश्वर। काकाजी-मनीं हाच निर्धार। निघाले घेतलें दर्शन सत्त्वर। राहीना अस्थिरता मनाची।।३७।। काकाजीनें दहा दिवस। त्र्यंबकेश्वरीं केला वास। अखेरपर्यंत राहिला उदास। मनोल्लास लाधेना।।३८।। जाईना मनाची दुश्चित्तता। शमेना तयाची चंचलता। दिवसेंदिवस वाढे उद्विग्नता। निघाला मागुता काकाजी।।३९।। नित्य प्रातःस्नान करी। रुद्रावर्तन लिंगावरी। संततधार अभिषेक धरी। परि अंतरीं अस्थिर।।४०।। पुनश्च जाऊनि देवीद्वारीं। वदे कां धाडिलें त्र्यंबकेश्वरीं। आतां तरी मज स्थिर करीं। या येरझारी नको गे।।४१।। एणेंपरी अति काकुळती। धांवा करी तो देवीप्रती। देवी त्या दर्शन दे रातीं। वदे दृष्टान्तीं तयातें।।४२।। म्हणे मी जे बाबा वदत। ते शिर्डीचे साई समर्थ। त्र्यंबकेश्वरीं गमन किमर्थ। केलें कां निरर्थक कळेना।।४३।। कोठें शिर्डी कैसें जावें। बाबा हे न आपणा

ठावे। आतां हें जाणें कैसें घडावें। नकळे व्हावें कैसें कीं।।४४।। परि जो संतचरणीं रत। मनीं धरी दर्शनहेत। संतचि काय परि अनंत। सदिच्छा पुरवीत तयाची।।४५।। जो जो संत तो तो अनंत। नसे लवलेश उभयांत। किंबहुना उभय मानणें हेंचि द्वैत। संतां अद्वैत अनंतीं।।४६।। चालून जाईन संतदर्शना। स्वेच्छा पुरवीन मनींची कामना। ही तों केवळ अभिमान-वल्गना। अघटित घटना संतांची।।४७।। विना आलिया संतांच्या मना। कोण जाईल तयांचे दर्शना। आश्चर्य तयांच्या सत्तेविना। पान हालेना वृक्षाचें।।४८।। जैसी जयाची दर्शनोत्कंठा। जैसा भाव जैसी निष्ठा। सानंदानुभव पराकाष्ठा। भक्तश्रेष्ठा लाधते।।४९।। कैसें जावें साईदर्शना। इकडे काकाजीस ही विवंचना। तिकडे तयांचा शोधीत ठिकाणा। पातला पाहुणा शिर्डीचा।।५०।। पाहुणा तरी काय सामान्य। अवघ्यांपरीस जो बाबांस मान्य। जयाच्या प्रेमास तुळेना अन्य। अधिकारही धन्य जयाचा।।५१।। माधवराव नामाभिधान। देशपांडेपणाचें वतन। बाबांपाशीं अति लडिवाळपण। चालेना आन कवणाचें।।५२।। सदा सर्वदा प्रेमाचें भांडण। अरेतुरेचें एकेरी भाषण। पोटच्या पोरासम प्रेम विलक्षण। पातला तत्क्षण वणीस।।५३।। बाळास जंव जाहलें दुखणें। आईनें देवीस घातलें गाऱ्हाणें। तुझ्या ओटींत घातलें हें तान्हें। तारणें मारणें तुजकडे।।५४।। बाळ माझें बरें होतां। चरणांवरी घालीन तत्त्वतां। एणेंपरी देवीस नवसितां। लाधली आरामता बाळास।।५५।। वैद्य काय देव काय। कार्य उरकतां विसर होय। विपत्कालींच नवसाची सय। पावे जंव भय न फेडितां।।५६।। कित्येक वर्षें महिने दिवस। लोटले विसरले केलेला नवस। अंतीं मातेनें अंतसमयीस। माधवरावांस विनविलें।।५७।। बहुतां वर्षांचा हा नवस। फेडतां फेडतां आले हे दिवस। बरवी न दीर्घसूत्रता बहुवस। जाईं गा दर्शनास देवीच्या।।५८।। तैसेंच मातेच्या दोनी स्तनांस। खांडके पडूनि त्रासली असोस। होऊनियां बहु दुःसह क्लेश। आणिकही देवीस नवसिलें।।५९।। येतें माते लोटांगणीं। तारिसील जरी या यातनांतूनि। रौप्य-स्तनद्वय तुजवरूनि। ओवाळूनि वाहीन।।६०।। तोही नवस राहिला होता। फेडूं फेडूं म्हणतां म्हणतां। तोही आठवला मातेच्या चित्ता। देहावसानता-समयास।।६१।। देऊनि बब्यास याचीही आठवण। फेडीन म्हणून घेऊनि वचन। माता होऊनियां निर्वासन। गेली समरसोन हरिचरणीं।।६२।। पुढें मग जाऊं जाऊं म्हणतां। दिवस महिने वर्षें लोटतां। माधवरावांस जाहली विस्मरणता। नवस फेडितां राहिले।।६३।। एणेंपरी वर्षें तीस। होतां काय घडलें शिर्डीस। ज्योतिषी एक करीत प्रवास। त्याच स्थानास पातला।।६४।। ज्योतिर्विद्येचें ज्ञान गहन। जाणे भूत-भविष्य-वर्तमान। अनेक जिज्ञासु तृप्त करून। वाहवा मिळवून राहिला।।६५।। श्रीमंत केशवरावजी बुट्टी। आदिकरूनि बहुतांच्या गोष्टी। वर्तवूनि सकळांची संतुष्टी। उठाउठी संपादिली।।६६।। माधवरावांचा कनिष्ठ भ्राता। बापाजी आपुलें भविष्य पुसतां। ज्योतिषी तो जाहला वर्तविता। देवीची अप्रसन्नता तयावर।।६७।। म्हणे मातेनें केलेले नवस। तिच्या देहांताचिया समयास। तिणें तुझिया ज्येष्ठ बंधूस। फेडावयास आज्ञापिलें।।६८।। ते न फेडितां आजवरी। नडा देते देवी भारी। माधवराव येतां घरीं। बापाजी सारी कथी कथा।।६९।। माधवरावांस पटली खूण। सुवर्णकार आमंत्रून। करविले दोन रौप्य-स्तन। गेलें कीं घेऊन मशिदीं।।७०।। घालूनि बाबांस लोटांगण। पुढें ठेवून दोनी स्तन। वदते झाले बाबांलागून। म्हणती घ्या फेडून ते नवस।।७१।। तूंच आमुची सप्तशृंगी। तूंच देवी आम्हांलागीं। ही घे वाचादत्त देणगी। घेऊनि उगी रहावें।।७२।। बाबा वदती प्रत्युत्तरीं। जाऊनि सप्तशृंगीच्या मंदिरीं। वाहें तिचीं तीस चरणांवरी। स्तनें हीं साजिरीं निजहस्तें।।७३।। पडतां ऐसा बाबांचा आग्रह। माधवरावांच्या मनाचाही ग्रह। तैसाच होऊनि सोडिलें गृह। जाहला निग्रह दर्शनाचा।।७४।। घेतलें बाबांचें दर्शन। प्रार्थिलें शुभ आशीर्वचन। करोनि उदी-प्रसाद ग्रहण। अनुज्ञा घेऊन निघाले।।७५।। आले पहा ते सप्तशृंगीस। लागले कुलोपाध्याय शोधावयास। सुदैवें काकाजीचेच गृहास। अनायास प्राप्त ते।।७६।। काकाजीच्या उत्कंठा पोटीं। शीघ्र व्हावी बाबांची भेटी। तोंच ही माधवरावांची गांठी। हे काय गोठी सामान्य।।७७।। आपण कोण कोठील पुसतां। शिर्डीहूनचि आले समजतां। काय त्या आनंदा पारावारता। पडली उभयतां मिठीच।।७८।। ऐसे ते दोघे प्रसन्नचित्त। साईलीला गात गात। पूर्ण होतां नवसकृत्य। उपाध्ये निघत शिर्डीतें।।७९।। माधवरावांसारखी सोबत। तीही लाधली ऐसी अकल्पित। ऊपाध्येबुवा आनंदभरित। मार्ग लक्षीत शिर्डीचा।।८०।। नवस फिटतां शीघ्रगतीं। दोघे पातले शिर्डीप्रती। येतांच साईदर्शना निघती। परमप्रीतीं सोत्कंठ।।८१।। आधीं जैसी मनाची आवडी। तैशाच पाउलीं निघाले तांतडीं। पातले काकाजी गोदेथडीं। जेथून शिर्डी सन्निध।।८२।। पुजारी वंदी बाबांचे चरण। करीत सजलनयनीं स्नपन। होऊनि दर्शनसुखसंपन्न। चित्त प्रसन्न जाहलें।।८३।। देवीचा दृष्टांत होता यदर्थ। दृष्टी देखतां ते बाबा समर्थ। काकाजी सुखावले यथार्थ। पुरला मनोरथ तयांचा।।८४।। असो काकाजी सुखसंपन्न। दर्शनसेवनें चित्त प्रसन्न। जाहले खरेंच निश्चिंत मन। कृपाघन वर्षणें।।८५।। हरपलें मनाचें चंचलपण। स्वयें जहाले विस्मयापन्न। आपणांसचि पुसती आपण। काय विलक्षण ही करणी।।८६।। नाहीं कांहीं वदले वचन। नाहीं प्रश्न-समाधान। नाहीं दिधलें आशीर्वचन। केवळ दर्शन सुखदाई।।८७।। माझी चंचल चित्तवृत्ती। केवळ दर्शनें पावली निवृत्ती। लाधली अलौकिक सुखसंवित्ती। 'दर्शनमहती' या नांव।।८८।। साईपायीं जडली दृष्टी। तेणें वाचेस पडली मिठी। कर्णीं परिसतां बाबांच्या गोष्टी। आनंद पोटीं न समाये।।८९।। उपाध्येबुवा निजभावेंसीं। शरण गेले समर्थांसीं। पावते झाले निजसुखासी। विसरले वृत्तीसी पूर्वील।।९०।। ऐसे काकाजी बारा दिवस। राहते झाले तैं शिर्डीस। होऊनियां सुस्थिरमानस। सप्तशृंगीस परतले।।९१।। स्वप्नांसही लागे काळ। उषःकाळ वा प्रातःकाळ। तेव्हां जीं पडती तीं तींच सफळ। स्वप्नें निर्फळ तदितर।।९२।। ऐसी सार्वत्रिक प्रसिद्धी। परि या शिर्डीच्या स्वप्नांची सिद्धी। पडोत तीं कुठें आणि कधीं। भक्तां अबाधित अनुभव।।९३।। ये अर्थींची अल्प वार्ता। सादर करितों श्रोतयांकरितां। कौतुक वाटेल परम चित्ता। श्रवणोल्लासता वाढेल।।९४।। दोनप्रहरीं एके दिवशीं। बाबा वदती दीक्षितांपाशीं। टांगा घेऊन जा राहात्यासी। खुशाल-भाऊंसी घेऊन ये।।९५।। जाहले कीं दिवस बहुत। भेटावयाची मनीं आर्त। म्हणावें बाबांनीं तुम्हांप्रत। भेटीप्रीत्यर्थ बोलाविलें।।९६।। करूनियां आज्ञाभिवंदन। दीक्षित गेले टांगा घेऊन। खुशालभाऊ भेटले तत्क्षण। निवेदिलें प्रयोजन

आगमनाचें।।९७। ऐकूनियां बाबांचा निरोप। खुशालभाऊंस आश्चर्य अमूप। म्हणती हाच उठलों घेऊन झोंप। झोंपेंत आज्ञापत हेंचि मज।।९८।। आतांच मी दुपारा जेवूनि। करीत असतां आराम शयनीं। डोळ्यास डोळा लागतां क्षणीं। बाबाही स्वप्नीं हेंच वदत।।९९।। म्हणाले आतांच शिर्डीस चल। माझीही इच्छा जाहली प्रबळ। करूं काय घोडें न जवळ। मुलास कळवाया धाडिलें।।१००।। मुलगा वेशीच्या बाहेर पडला। तोंच हा आपुला टांगा आला। दीक्षित विनोदें म्हणती तयाला। तदर्थच मजला आज्ञापिलें।।१०१।। आतां स्वयें येत असला तर। टांगा बाहेर आहे तयार। मग ते शिर्डीस आनंदनिर्भर। दीक्षितांबरोबर पातले।।१०२।। तात्पर्य खुशालभाऊ भेटले। बाबांचेही मनोरथ पुरले। खुशालभाऊही बहु गहिंवरले। पाहून या लीलेस बाबांच्या।।१०३।। एकदां एक पंजाबी ब्राह्मण। रामलाल नामाभिधान। मुंबईमध्यें वसतां जाण। बाबांनीं स्वप्न दिलें तया।।१०४।। दिङ्-वायु-रवि-वरुणादि देवता। यांच्या अनुग्रहाचिया सत्ता। बाह्यांतःकरण-विषयग्राहकता। जागरितता त्या नांव।।१०५।। विरमे जंव सकल इंद्रियगण। होई जाग्रत्संस्कारप्रबोधन। ग्राह्यग्राहकरूपें स्फुरण। असें हें लक्षण स्वप्नाचें।।१०६।। त्याचें स्वप्न तों विलक्षण। ठावें न बाबांचें रूपलक्षण। पूर्वी कधीं नाहीं दर्शन। ''मजकडे येऊन जा'' म्हणत।।१०७।। आकृतीवरून दिसले महंत। परि न ठावें ते कोठें वसत। रामलाल होऊन जागृत। विचाराकुलित जाहला।।१०८।। जावें ऐसें वाटलें मना। पत्ता नाहीं ठावठिकाणा। परि जो तयासी बोलावी दर्शना। तयाची रचना तो जाणे।।१०९।। मग तेच दिवशीं दुपारीं। सहज रस्त्यानें मारितां फेरी। छबी एके दुकानावरी। पाहूनि अंतरीं चमकला।।११०।। स्वप्नीं जें रूप दिसलें तयाला। तेंच तें गमलें रामलालाला। विचारपूस कराया लागला। दुकानदाराला तात्काळ।।१११।। लक्ष लावून छबी पाहे। कोण कोठील आहेत हो हे। कळतां हा साई शिर्डींत आहे। स्वस्थ राहे रामलाल।।११२।। पुढील पत्ता पुढें लागला। रामलाल शिर्डीस गेला। बाबांचिया निर्वाणकाला-। पर्यंत राहिला त्यांपाशीं।।११३।। आपुल्या भक्तांचे पुरवावे हेत। आणावें तयांस दर्शनार्थ। पुरवावे स्वार्थ वा परमार्थ। हेचि मनोरथ बाबांचे।।११४।। नातरी ते अवाप्तकाम। स्वयें सर्वदा निष्काम। निःस्वार्थ निरहंकार निर्मम। भक्तकामैक-अवतार।।११५।। क्रोध ज्याचा घेई न वारा। द्वेषास जेथें न लभे थारा। डोळां न देखे जो उदरंभरा। साधु खरा तो समजावा।।११६।। सर्वांठायीं प्रेम निःस्वार्थ। हाच ज्याचा परमपुरुषार्थ। वेंची न धर्मविषयाव्यतिरिक्त। वाचा हा व्यर्थ पळभरी।।११७।। सारांश माझा धरूनि हात। लिहवून घेतां हें निजचरित। भक्तीं व्हावें निजस्मरणरत। हेंचि कीं इंगित येथील।।११८।। म्हणवूनि हेमाड अति विनीत। नित्य श्रोतयां हेंचि विनवीत। होऊनि श्रद्धाभक्तिसमन्वित। साईसच्चरित परिसावें।।११९।। तेणें मनास होईल शांती। उपजेल व्यसनमग्ना उपरती। जडेल साईचरणीं भक्ती। भवनिर्मुक्तिदायक।।१२०।। असो पुढील अध्यायीं आतां। संन्यासी विजयानंदाची कथा। जयास मानस-सरासी जातां। लाधली निर्मुक्तता निजपदीं।।१२१।। भक्त मानकर बाळाराम। तयाही तैसाच दिधला विश्राम। तोच नूलकर-मेघांचा काम। पुरवी प्रकाम साईनाथ।।१२२।। व्याघ्रासारखा क्रूर प्राणी। तयाही दिधला ठाव चरणीं। ऐसी अगाध साईंची करणी। श्रवणा पर्वणी-महोत्सव।।१२३।। स्वस्ति श्रीसंतसज्जनप्रेरिते। भक्तहेमाडपंतविरचिते। श्रीसाईसमर्थसच्चरिते। नवसादिकथाकथनं नाम त्रिंशत्तमोऽध्यायः संपूर्णः।।

।। श्रीसद्गुरुसाईनाथार्पणमस्तु।। शुभं भवतु।।